कबीर का साहित्यिक परिचय एवं निर्गुण काव्यधारा की विशेषताएं

–नवनीत भाउटा

कबीर जी का साहित्यिक परिचय :

महात्मा कबीर का जन्म काशी में सन् 1398 ई0 में हुआ। उनका पालन-पोषण नीरू-नीमा नामक बुनकर दम्पति ने किया। कहा जाता है कि उन्हें यह बालक लहरतारा तालाब के किनारे रखा हुआ मिला था। महात्मा कबीर जी रामानंद जी के शिष्य थे अथवा शेख तकी के, इस पर भी विवाद है। प्रायः यह माना जाता है कि रामानंद जी ही उनके गुरु थे। कबीर जी अपना पारिवारिक व्यवसाय अर्थात कपड़ा बुनने का काम करते हुए राम का नाम लेते थे और अपना अधिक समय साधुओं की संगति में गुज़ारते थे।

महात्मा कबीर विवाहित थे और उनकी पत्नी का नाम लोई था। उनका एक बेटा व एक बेटी थी। जिनके नाम कमाल तथा कमाली थे। कबीर की वाणी में सच्चाई की ताकत थी तभी तो वे हिन्दू धर्मान्धता के गढ़ काशी में बैठकर विद्वान, शक्तिशाली ब्राह्मणों को चुनौती दे सके। कबीर जी के पास गर्व करने के लिए न ऊँचा वंश था, न जाति, न उच्च शास्त्रीय ज्ञान था, न धन-दौलत का अंबार था, न राजाश्रय था और न ही शिष्यों की बड़ी भीड़ फिर भी उन्होंने सच्चाई के बल पर ब्राह्मणों और मुल्लाओं को एक साथ चुनौती दी थी। उनका काव्य दो प्रकार का था :-

- खंडन-मंडन प्रधान सुधारवादी काव्य
- साधना परक भक्ति काव्य

खंडन-मंडन प्रधान काव्य में उनकी ऐसी उक्तियां ली जा सकती हैं जिनमें उन्होंने कर्म-काण्डों, अंधविश्वासों, कुरीतियों तथा दुराचार का विरोध किया है। महात्मा कबीर ने निधड़क होकर बिना किसी डर के सामाजिक, धार्मिक तथा नैतिक कमज़ोरियों पर प्रहार किया। उनका लक्ष्य सदा ही समाज सुधार रहा। उदाहरण के लिए निम्नलिखित दोहे देखे जा सकते हैं :-

पाथर पूजे हरि मिले, तो मैं पूजूं पहार।
ताते ये चाकी भली, पीसी खाए संसार।।

माला फेरत जुग गया, मिटा न मन का फेर।
कर का मनका डारि के, मन का मनका फेर।।

कंकर पत्थर जोरी के, मस्ज़िद लई बनाए।
ता चढ़ि मुल्ला बांग दे, बहरा हुआ खुदाय।।

इसी प्रकार महात्मा कबीर ने सदाचार पर बल दिया और उसे धर्म का मूल माना। संतोष, संयम, परोपकार, मधुर वचन, दया, विनम्रता आदि गुणों को उन्होंने जीवन में महत्त्व दिया और लिखा।

हे प्रभु इतना दीजियो, जा में कुटुम्ब समाय।

मैं भी भूखा न रहूं, साधु न भूखा जाय।।

महात्मा कबीर के आध्यात्मिक सिद्धान्तों में सर्वप्रथम स्थान निराकार ईश्वर की उपासना का है, वे कहते भी हैं :-

पूजा करूँ न नमाज़ गुजारूँ, एक निराकार हृदय नमस्कारूँ।

महात्मा कबीर ने जीवन की क्षणभंगुरता, संसार की निस्सारता, माया के ज़ाल तथा विषय विकारों की प्रबलता पर भी लिखा है। वे कहते भी हैं :

माखी गुड़ में गड़ी रही, पंख रह्यो लपटाय।
हाथ मले और सिर धुनै, लालच बुरी बलाय।।

महात्मा कबीर ने दर्शन को इतना सरल बना दिया कि साधारण आदमी भी उसे समझ सके। उनकी दार्शनिक विचारधारा शास्त्रीय न होकर व्यावहारिक थी।

कबीर की रचनाएं :

कबीर जी की मूल रचना का नाम **बीजक** है। जिससे धर्मदास द्वारा संग्रहीत किया गया। **बीजक** के तीन भाग हैं- **साखी, सबद और रमैनी।** दोहा, सोरठा, छन्द में अध्यात्म, नीति और लोक व्यवहार की बातों को 'साखियों' में व्यक्त किया गया है। जो रचनाएं 'पद' के रूप में हैं उन्हें 'सबद' कहा गया है। कबीर जी के सबद आध्यात्मिक अनुभव, सिद्धान्त और भावात्मक गेय पद हैं। उनकी उलट बासियां भी इसी में आती हैं। 'रमैनी' नित्य पाठ के लिए लिखी गई दोहा चौपाई शैली की रचनाएं हैं। नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ने 'कबीर रचनावली' और 'कबीर ग्रन्थावली' नाम से कबीर जी की रचनाओं का प्रकाशन किया है।

कबीर जी की भाषा सधुक्कड़ी थी जिसमें भोजपुरी, अवधी, ब्रज, खड़ीबोली तथा पंजाबी का मिश्रण भी था। कबीर जी ने इसलिए भाषा को 'बहता नीर' कहा था।

निर्गुण काव्य की प्रवृत्तियां :-

किसी सन्त ने उद्भावित और उद्घोषित किया है-

साधु तो भाई जैसा देखसी वैसा कहसी

घोड़े को घोड़ा कहसी गधे को गधा कहसी।

निर्गुण सन्त माया-मोह की कामना से विरहित आत्मसाधना में लीन अक्खड़-फक्खड़ तथा साफ-सहज-स्वच्छ जीवन जीने के अभ्यासी साधु-मानव थे। उनकी 'कथनी' और 'करनी' में विशेष तादात्म्य था, जैसा वे देखते थे, अनुभव करते थे वैसा उसे व्यक्त-व्यंजित करने में नहीं सकुचाते थे। कबीर दास भी इसी स्वभाव के सन्त थे। उनके निर्गुण काव्य की विशेषताएं निम्नलिखित हैं :-

निर्गुण-निराकार ब्रह्म की उपासना-

आस का दुख प्यास जानै प्यास का दुख नीर।

भगत का दुख राम जाने कहै दास कबीर।।

गुरु की गुरुता के प्रति दिव्य श्रद्धा–

सतगुरु की महिमा अनँत, अनँत किया उपगार।
लोचन अनँत उघाड़िया, अनँत दिखावणहार।।

जीव रचा जगदीश नैं, बांध्या काया माहि।
जन रजब मुक्ता किया, तौ गुर समि कोई नाहिं।।

माया की व्यर्थता का प्रतिपादन–

माया महा ठगिनि हम जानी।
तिरगुन फाँसि लिये कर डोलै, बोलै मधुरी बानी।

संसार की असारता का निरूपण–

जेते सुख संसार के इकट्ठे किये बटोर।
कन थोरे कांकर घने, देखा फटक पछोर।।
साधु संगति पाइये राम अभी फल होइ।
संसारी संगति पाइये विष भल देवे सोई।।

भक्ति–भावना के विविध आयाम–

पाथर पूजे हरि मिले, तो मैं पूजूं पहार।
ताते ये चाकी भली, पीसी खाए संसार।।
माला फेरत जुग गया, मिटा न मन का फेर।
कर का मनका डारि के, मन का मनका फेर।।

सामाजिक सुधार की संदृष्टि–

जो तुम ब्राह्मन ब्राह्मनि जाये, अवर राह ते काहे न आये।
जो तुम तुरूक तुरूकनी जाये, पेटहि काहे ने सुनति कराये।।

माखी गुड़ में गड़ी रही, पंख रह्यो लपटाय।
हाथ मले और सिर धुनै, लालच बुरी बलाय।।

मथुरा जावै द्वारका, भावै जावै जगन्नाथ।
साध संगति हरि भगति बिनु, कछु ना आवै हाथ।।

नारी विषयक चिन्तन-

मैं सेवक समरत्थ का कबहुँ न होय अकाज।
पतिबरता नांगी रहै, तो वाही पति को लाज।।

हरि जननी मैं बालिक तेरा, काहे न औगुण बकसहु मेरा।
सुत अपराध करै दिन केते, जननी के चित रहैं न तेते।।

नैतिक भावना की प्रबलता-

प्रेम प्रीति इसनेह बिन, सब झूठे सिंगार।
दादू आतम रत नहीं, क्यों मानै भरतार।।

गला गुसे का काटिये मिथा मनी कौ मारि।
पंचौ बिसमिल कीजिए ये सब जीव उबारि।।

रहस्यात्मकता–

बालम आओ हमारे गेह रे तुम बिन दुखिया देह रे।
सब कोई कहै तुम्हारी नारी मो को यह अंदेह रे।
एकमेक है सेज न सोवै, तब लगि कैसो नेह रे।।

मानवतावादी चिन्तन–

कछु न कहाव आप कौं, काहू संग न जाइ।
दादू निर्पख है रहै, साहिब सौं ल्यौ लाई।।

शिल्प–योजना–

संतो भाई आई ग्यांन की आंधी रे।

भ्रम की टाटी सभै उड़ानी माया रहै न बांधी रे।।

दुचिते की दोइ थूनि गिरांनी मोह बलेंडा टूटा।

त्रिसनां छांनि परी घर ऊपरि दुरमति भांडा टूटा।।

आंधी पाछै जो जल बरसै तिहि तेरा जन भींना।

कहै कबीर मनि भया प्रगासा उदै भानु जब चीनां।।

निर्गुण काव्य की उपलब्धियां-

विवेचित विचार बिन्दुओं के आलोक में कहा जा सकता है कि हिन्दी निर्गुण काव्यधारा के सन्त अध्यात्मपथ के प्रसन्न पथिक थे। ब्रह्मानुध्यान-ब्रह्मानुचिन्तन तथा उस अकथ का भावन-व्यंजन ही उनका सर्वस्व था। अपनी इस सर्वस्व चेतना को वे समाज में फैला देने के अभिलाषी थे। सन्तों ने सम्पूर्ण समाज को एक राह पर लाने के लिए, मत-मत में एकमत स्थापित करने के लिए ऐसे ब्रह्म की संकल्पना प्रदान की जो सभी जातियों एवं धर्मावलम्बियों को अंगीकार हो। उन्होंने उस ब्रह्म का नाम राम प्रस्तावित किया। सन्तों का यह राम निर्गुण-निराकार है। रूप-स्वरूप से परे है, वाणी और व्यंजना से ऊपर है। वह तो ध्यानगम्य है, अनुभवगम्य है।

धन्यवाद!